इंका-आर. एस. एस. गठजोड़

प्रतिपक्ष

वर्ष 6 अंक 30 | रविवार 25 नवम्बर 1984 | मूल्य एक रुपया.

लेखक को राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ का चिंतक विचारक एंव नीतिनिर्देशक माना जाता है। प्रधानमंत्री हत्या के बाद उन्होंने इस दस्तावेज़ को प्रमुख राजनेताओं के बीच बांटा है। इसका एक ऐतिहासिक महत्व है, इसी कारण हमने अपने साप्ताहिक के नियमों का उल्लंघन कर इसे प्रकाशित करने का निर्णय लिया है। यह दस्तावेज़ इंका और आर. एस. एस. के सम्बंधों के नए समीकरण को उजागर करता है। प्रस्तुत है दस्तावेज़ का हिन्दी अनुवाद।

—सम्पादक—

आत्मदर्शन के क्षण

नानाजी देशमुख

अंततः इन्दिरा गांधी ने इतिहास के प्रवेश द्वार पर एक महान शहीद के रूप में स्थाई स्थान पा ही लिया है। उन्होंने अपनी निर्भीकता और व्यवहार कौशलता में संयोजित गतिकता के साथ कोलोसस की भांति देश को एक दशक से भी अधिक समय तक आगे बढ़ाया और यह राय बनाने में समर्थ रहीं कि केवल वही देश की वास्तविकता को सही समझती थीं, कि मात्र उन्हीं के पास हमारे भ्रष्ट और टुकड़ों में बंटे समाज की सड़ी-गली राजनैतिक प्रणाली को चला सकने की क्षमता थी, और, शायद केवल वही देश को एकता के सूत्र में बांधे रख सकती थीं। वह एक महान् महिला थीं और वीरों की मौत ने उन्हें और भी महान बना दिया है। वह ऐसे व्यक्ति के हाथों मारी गई जिसमें, उन्होंने कई बार शिकायत किए जाने के बावजूद, विश्वास बनाये रखा। ऐसे प्रभावशाली और व्यस्त व्यक्तित्व का अंत एक ऐसे व्यक्ति के हाथों हुआ जिसे उन्होंने अपने शरीर की हिफाजत के लिए रखा। यह आलोचकों को भी एक आघात के रूप में मिली। हत्या की इस कायर और विश्वासघाती कार्रवाई में न केवल एक महान नेता को मौत के घाट उतारा गया बल्कि पंथ के नाम पर मानव के आपसी विश्वास की भी हत्या की गई। देशभर में अचानक आगज़नी और हिंसक उन्माद का विस्फोट शायद उनके भक्तों के आघात, गुस्से और किंकर्तव्यविमूढ़ता की एक दिशाहीन और अनुचित अभिव्यक्ति थी। उनके लाखों भक्त उन्हें एक मात्र रक्षक, शक्तिवान एवं अखंड भारत के प्रतीक के रूप में देखते थे। इस बात का ग़लत या सही होना दूसरी बात है।

इस निरीह और अनिभिज्ञ अनुयायियों के लिए इंदिरा गांधी की विश्वासघाती हत्या, तीन साल पहले शुरू हुई अलगाववादी, द्वेष और हिंसा के विषाक्त अभियान, जिसमें सैंकड़ों निर्दोष व्यक्तियों को अपनी कीमती जानों से हाथ धोना पड़ा और धार्मिक स्थलों की पवित्रता नष्ट की गई, की ही त्रासदीपूर्ण परिणिति थी। इस अभियान ने जून में उन धार्मिक स्थानों की पवित्रता की रक्षा के लिए आवश्यक हो गयी थी, के पश्चात भयंकर गति ली। कुछ अपवादों को छोड़कर नृशंस हत्याकांड और निर्दोष लोगों की जघन्य हत्याओं को लेकर सिख समुदाय में आमतौर पर दीर्घकालीन मौन रहा, किन्तु लम्बे समय से लम्बित सैनिक कार्यवाई की निन्दा गुस्से और भयंकर विस्फोट के रूप में की। इनके इस रवैये से देश स्तब्ध हो गया। सैनिक कार्यवाइ की तुलना 1762 में अहमद शाह अब्दाली द्वारा घल्लू घड़ा नामक कार्यवाई में हर मंदिर साहब को अपवित्र करने की घटना से की गई। दोनों घटनाओं के उद्देश्यों में गए बगैर इन्दिरा गांधी को अब्दुल शाह अब्दाली की श्रेणी में धकेल दिया गया। उन्हें सिख पंथ का दुश्मन मान लिया गया और उनके सिर पर बड़े-बड़े इनाम रख दिए गए थे। दूसरी ओर, धर्म के नाम पर मानवता के विरूद्ध जघन्य हत्याओं का अपराधकर्ता भिण्डारावाले को शहीद होने का ख़िताब दिया गया। देश के विभिन्न हिस्सों में और विदेशों में ऐसी भावनाओं के आम प्रदर्शनों ने भी सिख और शेष भारतीयों के बीच अविश्वास और विमुखता को बढ़ाने में विशेष कार्य किया। इस अविश्वास और विमुखता की पृष्ठभूमि में सैनिक कार्रवाई के बदले में की गई इन्दिरा गांधी की, अपने ही सिख अंगरक्षकों द्वारा, जघन्य हत्या पर, गलत या सही, सिखों द्वारा मनाई जाने वाली खुशी की अफ़वाहों को स्तब्ध और किंकर्तव्यविमूढ़ जनता ने सही मान लिया। इसमें सबसे अधिक आघात पहुंचाने वाला स्पष्टीकरण ज्ञानी कृपाल सिंह का था जो कि प्रमुख ग्रन्थी होने के नाते स्वयं को सिख समुदाय का एकमात्र प्रवक्ता समझते हैं। उन्होंने कहा कि उन्होंने इन्दिरा गांधी की मृत्यु पर किसी भी प्रकार का दुख ज़ाहिर नहीं किया। उबल रहे क्रोध की भावना में इस वक्तव्य ने आग में घी डालने का काम किया। महत्वपूर्ण नेता द्वारा दिये गये ऐसे घृणित वक्तव्य के विरोध में ज़िम्मेदार सिख नेताओं, बुद्धिजीवियों

इंका-आर. एस. एस. गठजोड़

पृष्ठ 1 का शेष

या संगठनों द्वारा कोई तत्काल और सहज निन्दाजनक प्रतिक्रिया नहीं की गयी अस्तु पहले से ही गुस्सा हुए साधारण और अकल्पनाशील लोगों ने यह सही समझा कि सिखों ने इन्दिरा गांधी की मौत पर खुशियां मनाईं। इसी विश्वास के कारण स्वार्थी तत्वों को आम लोगों को निरीह सिख भाईयों के खिलाफ हिंसक बनाने में सफलता मिली।

यह सबसे अधिक विस्फोटक स्थिति थी जिसमें कि हमारे सिख भाईयों द्वारा चरम धैर्य और स्थिति का कौशलतापूर्ण संचालन किये जाने की आवश्यकता थी। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का आजीवन सदस्य होने के नाते मैं यह कह रहा हूं क्योंकि 30 जनवरी 1948 को एक हिन्दू धर्मान्ध, जो कि मराठी था, लेकिन जिसका राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से कोई भी रिश्ता नहीं था बल्कि संघ का कटु आलोचक था, ने महात्मा गांधी की दुर्भाग्यपूर्ण हत्या की। इस अवसर पर हमने भी दिग्भ्रमित लोगों के अचानक भड़के उन्माद, लूटपाट और यंत्रणाओं को भोगा। हमने स्वयं देखा था कि कैसे स्वार्थी तत्वों, जो कि इसी घटना से वाकिफ थे, ने पूर्व नियोजित ढंग से एक खूनी को राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का सदस्य बताया और यह अफवाह भी फैलाई कि राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के लोग महात्मा गांधी की मृत्यु पर देश भर में खुशियां मना रहे थे और इस प्रकार गांधी के लिए लोगों के दिलों में उपजे प्यार और लोगों के किंकर्तव्यविमूढ़ और आघात हुई भावना को ग़लत रास्ते की ओर उन्मुख करने में सफल रहे। स्वयं-सेवकों और उनके परिवारों, विशेषकर महाराष्ट्र में, के विरुद्ध ऐसी भावनाएं फैलाई गईं।

स्वयं इन अनुभवों से गुज़र चुकने के कारण मैं इन मासूम सिख भाईयों, जो जनता के अकस्मात भड़के हिंसक उन्माद के शिकार हुए, की सख्त प्रतिक्रिया और भावनाओं को समझ सकता हूं। वस्तुतः मैं तो सबसे अधिक कटु शब्दों में सिख भाईयों पर दिल्ली में और कहीं भी की गई अमानवीय और बर्बरता और क्रूरता की निन्दा करना चाहूंगा। मैं उन सभी हिन्दू पड़ोसियों पर गर्व महसूस करता हूं कि जिन्होंने अपनी जान की परवाह किये बग़ैर मुसीबत में फंसे सिख भाईयों की जान-माल की हिफ़ाज़त की। पूरी दिल्ली से प्राप्त होने वाली ऐसी बातें सुनने में आ रही हैं। इन बातों ने व्यावहारिक तौर पर मानवीय व्यवहार की सहज अच्छाई में विश्वास बढ़ाया है तथा खासतौर पर हिन्दू प्रकृति में विश्वास बढ़ाया है।

ऐसी नाज़ुक और विस्फोटक स्थिति में सिख प्रतिक्रिया को लेकर भी मैं चिंतित हूं। आधी शताब्दी से देश के पुनर्निर्माण और एकता में नाते मैं यह कहने में हिचकिचाहट महसूस कर रहा हूं कि यदि सिखों द्वारा जवाबी हथियार बन्द कार्रवाई आंशिक रूप से भी सही हैं तो वे स्थिति का सही और पूर्णरूपेण जायज़ा नहीं ले पाए और फलस्वरूप अपनी प्रतिक्रिया स्थिति के अनुरूप नहीं कर पाए। मैं यहां सिखों समेत अपने सभी देशवासियों का ध्यान इस ओर दिलाना चाहता हूं कि महात्मा गांधी की हत्या से उपजी ऐसी ही विषम परिस्थिति में जब राष्ट्रीय स्वयंसेवकों के विरुद्ध फैले उन्माद में उनकी सम्पत्तियों को नष्ट किये जाने, जघन्य बच्चों के ज़िन्दा जलाए जाने, जघन्य हत्याओं, अमानवीय क्रूरता इत्यादि के अपराध हो रहे थे और देश भर से लगातार समाचार नागपुर पहुंच रहे थे तो तथाकथित 'बड़ी व्यक्तिगत सेना' के नाम से जाने जाने वाले राष्ट्रीय सेवक संघ के 'तानाशाह', संघ के तत्कालीन प्रधान स्व० एम० एस० गोवालकर ने नागपुर में एक फरवरी 1948 को देश भर के लाखों अस्त्रों से लैस नौजवान अनुयाईयों के नाम एक अपील निम्न अविस्मरणीय शब्दों में की :

"मैं अपने सभी स्वयं सेवक भाईयों को निर्देश देता हूं कि भले ही नासमझी से उत्तेजना क्यों न फैले लेकिन सबके साथ सौहार्दपूर्ण रवैया अपनायें और यह याद रखें कि यह आपसी नासमझ और अनुचित उन्माद उस प्यार और श्रद्धा का प्रतिफल है जो देश को दुनियां की नज़र में महान बनाने वाले महान महात्मा के लिए सम्पूर्ण राष्ट्र के हृदय में हैं। ऐसे महान श्रद्धेय दिवंगत को हमारा नमस्कार।"

यह आशाहीन समय में डरपोकपने और असहाय स्थिति को छुपाने के लिए खाली शब्द नहीं थे। ऐसे गम्भीर क्षणों में अपनी जान पर बन जाने पर भी उन्होंने यह साबित किया कि उनकी अपील के हर शब्द का अर्थ है। एक फरवरी की शाम को नागपुर के सैकड़ों स्वयं सेवकों ने सशस्त्र प्रतिरोध और खून की अंतिम बूंद रहने तक अपने नेता पर होने वाले उसी रात के संभावित हमले को रोकने के लिए आग्रह किया। और श्री गुरुजी को उनके कुछ साथियों ने उनकी जिन्दगी को लेकर षडयंत्र की बात बताई और हमला होने से पहले निवास सुरक्षित स्थान में बदलने का अनुरोध किया तो श्री गुरुजी ने ऐसी काली घड़ी में भी उनसे कहा कि जब वही लोग, जिनकी सेवा उन्होंने सम्पूर्ण जीवन सच्चाई और पूरी योग्यता से की, उनके प्राण लेना चाहते हैं तो उन्हें क्यों और किसके लिए अपनी जान बचानी चाहिए। इसके बाद उन्होंने बड़ी सख्त आवाज़ में उन्हें सचेत किया था कि यदि उन्हें बचाने में उनके देशवासियों के खून की एक भी बूंद जाएगी तो उनके लिए ऐसा जीवन व्यर्थ होगा। इतिहास साक्षी है कि देश भर में यद्यपि उन्हें अपने इस धैर्य, सहनशीलता के बदले में उन पर उछाली गई अभद्रता को पचाना पड़ा था लेकिन उनका स्वयं का धीरज बांधने के लिए एक विश्वास था कि चाहे वर्तमान परिस्थिति में उनकी नियति कुछ भी हो इतिहास अवश्य ही उन्हें निर्दोष साबित करेगा।

मैं आशा करता हूं कि ऐसी विषम वर्तमान स्थिति में मेरे सिख भाई भी उपरोक्त रूप से ही सहनशीलता

बाला साहब देवरस

और धैर्य का प्रदर्शन करेंगे। लेकिन मुझे बहुत दुख होता है यह जानते हुए कि ऐसी सहनशीलता और धैर्य का प्रदर्शन करने के बजाय उन्होंने कुछ स्थानों पर कुछ भीड़ के साथ सशस्त्र तरीकों से बदले की कार्रवाई की और ऐसे स्वार्थी तत्वों के हाथों में खेले जो कि झगड़े फैलाने को उत्सुक थे। मुझे आश्चर्य होता है कि सबसे अधिक अनुशासित, संगठित और धर्मपरायण समझे जाने वाले हमारे समाज के अंग ने कैसे ऐसा नकारात्मक और स्व-पराजयी दृष्टिकोण अपनाया। हो सकता है कि वे ऐसे संकट के मौक़े पर सही नेतृत्व पाने से वंचित रह गए हों। मेरे सिख इतिहास के क्षुद्र अध्ययन और समझ के अनुसार मैं मानता हूं कि ऐसे संकट के क्षणों में सिखों का अराजनैतिक प्रत्युत्तर उनके पूर्णरूपेण सिख प्रकृति के प्रेम, सहनशीलता और क़ुर्बानी की शिक्षा में लिप्त होने से हुआ। सिख धर्म की युद्धमान प्रकृति तो विदेशी मुग़लों की बर्बरता के ख़िलाफ़ अल्पकालीन प्रावधान था जो कि दसवें गुरु ने सिखाया था। उनके लिए खालसा अपेक्षाकृत विस्तृत सिख व हिन्दू भाई-चारे का एक छोटा सा हिस्सा था और हिन्दू समुदाय और उसकी परम्पराओं की रक्षा के लिए सशस्त्र हाथ के रूप में रचा गया था। पांच 'क' (केश, कृपाण, कंघा, कड़ा और कच्छा) और खालसा नामों में 'सिंह' शब्द की उपाधि गुरु गोविन्द सिंह द्वारा खालसा अनुयायियों के लिए ही निर्धारित की गई थी। यह उनके सैनिक होने के प्रतीक के रूप में था। लेकिन दुर्भाग्यवश, आज यही सिख धर्म के आधारिक और आवश्यक रूपों के तौर पर प्रक्षिप्त हो रहे हैं।

मुझे यह कहने का दुःख है कि खालसावाद में हुआ परिवर्तन बहुत बाद की घटना थी और यह ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के, विभक्त कर पंजाब में शासन करने के पूर्व नियोजित तरीकों की घृणित योजना को लागू करना था। इसका उद्देश्य सिखों को अपने ही हिन्दुओं के परिवेश से अलग करना था। दुर्भाग्यवश, आज़ादी के बाद सत्ता के भूखे राजनीतिज्ञों ने भी इन अप्राकृतिक रूप से उत्पन्न हुई अलग-थलग और बराबर के अस्तित्व जैसी समस्याओं को अपने स्वार्थों के लिए बनाए रखा और अपनी हिस्सों में बांटने वाली वोट की राजनीतिक के द्वारा साम्राज्यवादियों से विभाजन और शासन के खेल को और आगे बढ़ाया। सिखवाद का जुझारू खालसावाद से यह अनुचित एकात्मीकरण ही सिख समुदाय के कुछ हिस्सों में, न केवल अलगाववादी प्रवृत्तियों की मूल जड़ है, बल्कि इसने लड़ाकूपन और हथियारों की शक्ति पर विश्वसनीयता को ही धार्मिक भक्ति तक पहुंचा दिया।

इसी धार्मिक भक्ति ने बब्बर खालसा जैसे आतंकवादी आन्दोलन को दूसरे दशक में जन्म दिया और हाल ही के भिंडरावाले के नेतृत्व की आतंकवाद की लहर के प्रतिफल के रूप में इंदिरा गांधी की हत्या हुई और एक लम्बी 'हिट लिस्ट' को अभी अंजाम दिया जाना बाक़ी है।

मैं कल्पना करता था कि सिख समुदाय ने स्वयं को अशिक्षा, अज्ञान, कुण्ठा और पराजयवाद से पूर्णरूपेण मुक्त कर लिया है, जिसमें कि वह 19 वीं शताब्दी के पांचवे दशक में अपनी आज़ादी खोने के बाद था और जिसका फ़ायदा चालाक ब्रिटिश साम्राज्यवादियों व स्वार्थी सिख अभिजात वर्ग ने अपने स्वार्थों के लिए उसका शोषण करके उठाया। यह स्पष्ट है कि आठवें दशक में सिख श्रेष्ठ ज़िम्मेदारी के पद सुशोभित करते हुए जीवन के हर क्षेत्र में तथा उच्च शिक्षित, मेहनती, सतर्क, अपेक्षाकृत धनाड्य, प्रबुद्ध और सक्रिय भारतीय समाज के हिस्से के रूप में प्रतिनिधित्व करते हैं। उन्नीसवीं शताब्दी में उनके अनुभव और दृष्टि तत्कालीन पंजाब की सीमाओं तक ही सीमित थी लेकिन आज वे पूरे भारत ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में फैले पड़े हैं और इस स्थिति में हैं कि वे बड़ी ताकतों की उन साज़िशों को सीधे-सीधे जान सकते हैं जो, विश्व में मज़बूती के साथ उभरते हुए आज़ाद और अखण्ड भारत के विरुद्ध की जा रही हैं। ऐसी लाभकारी स्थिति से उन्हें ठीक से अपने ऐतिहासिक विकास को भारत के अभिन्न हिस्से के रूप में जानना चाहिए।

इतिहास का ऐसा पुनर्मूल्यांकन करने से ही उन्हें उन्हीं के धर्म और भूत के अनेकानेक ग़लत अवबोधनों को देखने का मौक़ा मिलेगा जोकि उनके मस्तिष्क में सुनियोजित ढंग से ब्रिटिश प्रशासकों, विद्वानों द्वारा धर्म की प्रवृति और विकास के बारे में ग़लत और कुचक्रपूर्ण ऐतिहासिक लेखन द्वारा भरा गया था। ऐसी कोशिश

यह सही समय है कि हमारे सिख भाई थोड़ा हृदय को टटोलें ताकि अपनी आधारिक धर्म प्रवृत्ति में ब्रिटिश साम्राज्यवादियों और सत्ता के लिए लालची अवसरवादी लोगों द्वारा ठूंसे मिथ्यावर्णन से मुक्ति पा सकें। ऐसे मिथ्यावर्णनों को हटाया जाना वर्तमान अविश्वास की खाई और दो एक जैसी नियति प्रवृति और एक जैसी परम्पराओं के समुदायों के बीच पैदा हो गई भिन्नता को पाटने के लिए आवश्यक हैं। मुझे डर है कि बिना ऐसे स्व-अंतर्दर्शन और इतिहास के पुर्नमुल्यांकन के वे अपने आपस में और अन्य देशवासियों के साथ चैन से नहीं रह पाएंगे। उनके अपने प्रबुद्ध हितों का एक निरपेक्ष विश्लेषण ही उन्हें यह समझाने को काफी होगा कि उनका भाग्य अभिन्न रूप से भारत की नियति के साथ जुड़ा है। एक ऐसी समझ उन्हें विदेशी ताक़तों के विघटन और विनाशकारी स्वार्थों के चक्कर में आने से स्वयं को बचा पाएगी।

मेरा अविश्वास है कि मेरे सिख भाई एक शुभचिंतक की आत्मिक अभिव्यक्ति के सतर्कतापूर्ण शब्दों को स्वीकार करेंगे।

अन्त में, यह उस सच की अस्वीकारोक्ति नहीं है कि इन्दिरा गांधी के भारतीय राजनैतिक क्षेत्र से अकस्मात निराकरण ने एक खतरनाक रिक्तता भारतीय आम जिंदगी में पैदा कर दी है। लेकिन भारत में ऐसे संकट और अनिश्चितता के क्षणों में सदैव ही एक विशिष्ट अंतशक्ति का प्रदर्शन किया। अपनी परम्पराओं के अनुसार एक सरल और शांतिमय तरीके से शक्ति और ज़िम्मेदारी को एक अपेक्षाकृत जवान व्यक्ति के अनुभवहीन कंधों पर डाला गया है। अभी से उसके नेतृत्व की सम्भावनाओं को लेकर कोई निर्णय करना हड़बड़ी का काम होगा। हमें उन्हें अपनी योग्यता दिखाने का कुछ समय तो देना ही चाहिए।

देश के ऐसे चुनौती भरे मोड़ पर, इस बीच वे देशवासियों से पूर्ण सहयोग और सहानुभूति प्राप्त करने के हक़दार हैं, भले ही वे किसी भी भाषा, धर्म, जाति, क्षेत्र या राजनीतिक विश्वास के हों।

एक अराजनैतिक रचनात्मक कार्यकर्ता की हैसियत से मैं मात्र यही आशा और प्रार्थना करता हूं भगवान उन्हें अधिक परिपक्व, संयत, और जनता को एक पक्षपातहीन सरकार देने की अंतशक्ति और क्षमता का आशीर्वाद दे ताकि देश को वे वास्तविक सम्पन्न एकता और यशोलाभ की ओर ले जायें।

गुरुनानक दिवस
नवम्बर 8, 1984

नाना देशमुख

प्रतिपक्ष
२९, तुगलक क्रिसेंट,
नई दिल्ली-११००११